शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अप्रैल 2013

केशवकृत 'रामचन्द्रिका' में भाव सौंदर्य

डॉ. बबीता सकवार (बुनकर)

शोध संक्षेप

महाकवि केशवदास रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि के रूप में समादृत हैं। उनकी प्रसिद्धि मुख्यतः 'रामचन्द्रिका', 'कविप्रिया' और 'रसिकप्रिया' को लेकर रही है। भावानुभूति और काव्यसौष्ठव की दृष्टि से उनकी सभी कृतियां - महत्वपूर्ण हैं। जीवन में सर्वाधिक व्यापक, गंभीर और मानव क्रियाकलापों को प्रभावित करने वाला भाव-'रति' है। निस्सन्देह यदि केशव ने भगवान् कृष्ण के चरित्र को इस विशद भूमिका में प्रतिष्ठित किया होता तो उनके जीवन में सभी रसों और भावों की उचित व्यंजना संभव थी। उन्होंने ऐसा नहीं किया, वरन् शृंगार का रसराजत्व प्रमा-णित करने के लिए, उसी के प्रसंग में अन्य सभी रसों की व्यंजना का अद्भुत प्रयोग किया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध में केशव की 'रामचंद्रिका' के भाव सौंदर्य को अनावृत किया गया है।

प्रस्तावना

केशवदास को यह ध्यान नहीं रहा कि 'करुण', 'वीभत्स', 'रौद्र', 'वीर' और 'भयानक' शृंगार रस के विरोधी माने गये हैं। विशेषतः एक ही आश्रय या एक ही आलम्बन से सम्बद्ध होने पर तो इनका विरोध काव्यसौन्दर्य को नष्ट कर देता है। यह - खरी उतरती है। :बात रामचन्द्रिका पर अक्षरश केशवदास दरबारी वातावरण के रंग में यह भूल गये कि कामशास्त्र के आधार पर रसशास्त्र की - मर्यादा का -शास्त्र लोक-रचना संगत नहीं है। रस सर्वथा उल्लंघन नहीं कर सकता। इसका यह तात्पर्य यह नहीं कि केशव का'रति' या 'श्रृंगार-वर्णन सर्वत्र हीन कोटि का है या उनमें भावाभिव्यक्ति की समुचित क्षमता नहीं है। जीवन की व्यापकता-मानव, प्रभाव और आकर्षण-क्षमता की दृष्टि से'रति' के बाद 'करुण' का स्थान है। राम भाव करुण है। इसलिए-कथा का बीज-'रामचन्द्रिका' में 'करुण' की सफल अभिव्यंजना केलिए पर्याप्त गुंजाइश है।

श्रृंगार

प्रारम्भिक अवस्था में रस का अर्थ श्रृंगार ही माना जाता था और रस के प्रवर्तक आचार्य कामशास्त्र के भी आचार्य माने जाते थे। भरतमुनि के 'अष्टौ नाट्य रसाः स्मृताः' का अभिप्राय संभवतः यही हो सकता है कि नाटक में आठ रस होते हैं। अन्यत्र चाहे एही रस और उस एक के द्वारा संकेत श्रृंगार के लिए ही प्रतीत होता है। विश्वनाथ जैसे विद्वान् ने श्रृंगार रस को आदिरस कहा है।[1] बाणभट्ट ने रस शब्द का प्रयोग श्रृंगार के अर्थ में किया है।[2] श्रृंगार की व्यापकता की दृष्टि से प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, श्रद्धा, भक्ति आदि उसके अनेक भेद हैं। नायिकाभेद की सृष्टि भी - शृंगार के कारण हुई है। संसार के कवियों को जितना इस रस ने आकर्षित किया है, उतना अन्य किसी रस ने नहीं। महाकवि बेली के शब्दों में वे सब कवि हैं जो प्रेम करते हैं और महान तथ्यों की अनुभूति तथा प्रतिपादन करते हैं और परम सत्य प्रेम है।[3]

आचार्य केशवदास ने तो स्पष्ट घोषणा की है

नवहू रस के भाव बहु तिनके भिन्न विचार।
सबको केसवदास हरि नायक है सिंगार।[4]

श्रृंगार दो भागों में विभाजित किया गया है - नायिका का -संयोग एवं वियोग। संयोग में नायक मिलन होता है। अतः उसकी अनुभूति सुखात्मक

है। केशव ने संयोग श्रृंगार में सौन्दर्यवर्णन-, रूप-वर्णन, हाववर्णन-भाव-, आभूषणवर्णन-, अष्टयाम, उपवन, जलाशय, क्रीड़ाविलास आदि का चित्रण - किया है। उन पर तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव था, अतः उनकी कविता श्रृंगारप्रधान है।-

क्रीड़ा सरवर में नृपति, कीन्हीं बहु विधि केलि।
निकसे तरूनि समेत जनु, सूरज किरन सकेलि।।5

रामचन्द्रजी सुन्दर पलंग पर लेटते हैं। परन्तु लेटते ही उन्हें ध्यान आ जाता है कि -

जिनके न रूप रेख, ते पौढियो नर वेश।
निसि नासियो तेहि वार, बहु बन्दि बोलत द्वारा।।6

'रामचन्द्रिका' में समस्त वर्णन संयत और भक्ति की मर्यादा के भीतर ही है।

कंटक अटकत फटि फटि जात।
उड़ि उड़ि वसन जात बस बात।
तऊ न तिनके तन लखि परे।
मनि गन अंग अंग प्रति धरे।।7

कहींकहीं इनका वर्णन अश्लीलता की सीमा तक - भी पहुँच गया है। अंगद द्वारा मन्दोदरी के केश पकड़कर चित्रशाला के बाहर ले जाने का प्रसंग इसीप्रकार का है।

बिना कुचुकी स्वच्छ वक्षोज राजैं,
किधौं सांचहूं श्रीफलें सोम साजें।
किधौं स्वर्न के कुम्भ लावन्य पूरे।
बसीकर्न के चूर्न सम्पूर्न पूरे।।8

यहां पर शिष्टता उल्लंघन भक्ति के आवेश में शत्रु की स्त्री की दुर्गति दिखाने के लिए किया गया है। मर्यादापूर्ण संयोग- श्रृंगार का एक चित्र देखिए-

जब जब धरि बीना प्रकट प्रवीन बहुगुनलीना सुख सीता।
पिय जियहि रिझावे दुखनि भजावे विवध बजावै गुन गीता।
तजि मति संसारी विपिन बिहार सुखदुखकारी घिरि आवैं।
तबदूषण सबको भूषण -तब जगभूषण रिपुकुल- पहिरावैं।9

जिस प्रकार दिनरात एवं सु-ख दुख का चक्र- (चक्रवत् परिवतन्ते दुःखानि च सुखानि च) चलता रहता है, उसी प्रकार संयोग के बाद वियोग एक सांसारिक नियम है। संयोग में नाना प्रकार की केलि एवं विहारादि के द्वारा मधुर रस का आस्वादन होता है तो वियोग में दर्शन आदि के अभाव में हृदय तीव्र वेदना से संतप्त रहता है वास्तव में प्रेम की सच्ची कसौटी वियोग ही है।

वीर रस

श्रृंगार के उपरान्त केशव का प्रिय एवं प्रधान रस वीररस कहा जा सकता है। ऐश्वर्य, प्रताप एवं वीरता के वर्णन में केशव को अत्यन्त सफलता मिली है। दरबार की विलासिता के साथसाथ - केशव को युद्ध की विभीषिका एवं भीषणता का भी अनुभव था। 'रामचन्द्रिका' में युद्ध के दो स्थल मुख्यतः दिखायी देते हैं। प्रथम तो राम-रावण-कुश का -युद्ध तथा द्वितीय राम की सेना और लव युद्ध।

रावण की ओर से भी भयंकर युद्ध का वर्णन किया गया है। खर का पुत्र मकराक्ष आता हुआ दिखाई देता है तो विभीषण राम को सचेत करते हुए पुकारते हैं।

कोदंड हाथ रघुनाथ सँभारि लीजै
भागे सबै समर जूथप दृष्टि दीजैं।
बेटा बलिष्ठ खर को मकराक्ष आयो
संहारकाल जनु काल कराल धायो।।10

प्रथम पंक्ति से मकराक्ष की भयानकता, भीषणता एवं विकरालता स्पष्ट व्यंजित होती है। दूसरी

पंक्ति के द्वारा विभीषण कहना चाहते हैं कि सेना में भागदौड़ मच गई है और आपने जरा भी विलम्ब किया और हार हुई। इसी प्रकार दूसरे स्थल पर विभीषण को युद्ध के लिए आता हुआ देखकर वीर बालक लव ललकारता है -

आउ विभीषण तं रन दूषन।
एक तू ही कुल को निज भूषन।
जूझ जुरैं जो भगे भय जी के।
सत्रुहि आनि मिले तुम नीके।
देववधू जबहीं हरि ल्यायो।
यौं अपने जिय के डर आयो।
क्षुद्र सबै कुलछिद्र बतायो।।-11

अर्थात् हे कायर विभीषण आ !, तू ही तो अपने कुल का भूषण है। व्यंग्य से कलंकित - करनेवाला है।

रौद्र रस

केशवकृत 'वीरसिंह देव चरित', 'रतनबावनी' तथा 'विज्ञानगीता' आदि में रौद्ररस की व्यंजना हुई है, परन्तु 'रामचन्द्रिका' में विशेष रूप से इस रस की सफल व्यंजना देखने को मिलती है। धनुर्भंग के उपरान्त परशुरामजी आकर विश्वामित्र पर अपमानजनक शब्दों में दोषारोपण करते हैं तो मर्यादापुरुषोत्तम राम गुरुअपमान क-ो असह्य समझते हुए सात्विक क्रोध से तिलमिला उठते हैं -

भगन भयौ हर धनुष साल तुमकों अब सालै।
वृथा होई विधिसृष्टि ईस आसन तैं चालै।।-
सकल लोक संधरै सेष सिर तैं धर डारे।
सप्त सिंधु मिलि जाहिं होई सब ही तम भारे।
अति अमल ज्योति नारायनी कहि 'केसव' बुझि जाइ वरू।
भृगुनन्द सँभारु कुठार मैं कियो सरासनजुक्त सरु।।12

प्रस्तुत छन्द क्रोधान्ध राम की उक्ति है जिसमें स्थायी भाव क्रोध, आश्रय स्वाभिमानी राम, आलम्बन परशुराम, उद्दीपन परशुराम का कुठार धारण आदि, दांत पीसना, आंखों का लाल होना, अनुभाव रामचन्द्र की चेष्टाएं आदि उक्तियां तथा अमर्ष, गर्व आदि संचारी भावों द्वारा रौद्ररस की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। आगे चलकर जब रावण जानकी से अपनी पत्नी हो जाने का प्रस्ताव करता है, उस समय सीताजी ने जो सात्त्विक क्रोधावेश की अभिव्यक्ति की है उसमें रौद्ररस का *सुन्दर परिपाक हुआ है।*

अति तनु धनरेख नेक नाकी न जाकी।-
खल सरखरधारा क्यों सहै तिक्ष ताकी।-
विड़कन घन घूरे भक्षि क्यों बाज जीवै।
सिव सिर ससिश्री कों राहु कैसे सु छीवै।
उठि उठि ह्यातें भागु तौ लों अभागे।
मम वचन विसर्पी सर्प जौ लौं न लागे।
विकल सकलु देखौं आसु ही नासु तेरो।
निपत मृतक तोकौं रोष मारै न मेरो।।13

भयानक रस

धनुर्भंग के उपरांत परशुरामजी के आने पर भय के कारण सर्वत्र खलबली मच जाती है। मस्त हाथियों का मद उतर जाता है। अब वे एकदूसरे - ठौर पर सुन्दर -को देखकर गरजते नहीं हैं। ठौर -नगाड़े नहीं बजते। पीढ़ियों के शूरवीर लोग अस्त्र शस्त्रफेंकअपने जीव ले भागते हैं -फेंककर अपने- काटकर स्त्री का -कोई तो कवचादि काट-और कोई वेश धारण कर लेते हैं। भयानक रस की यहां अत्यंत सुन्दर व्यंजना हुई है।

मत्त दन्ति अमत्त ह्वै गए, देखि देखि न गाजहीं।

ठौर ठौर सुदेस केसव दुंदुभी नहिं बाजहीं।
डारि डारि हथ्यार सूरज जीव लै लै भाजहीं।
काटिके तनत्रान एकनि नारि भेषन साजहीं।।14

रावण की सभा का वर्णन करते समय आतंक का चित्र अंकित किया गया है।

पढ़ौ विरंचि मौन वेद जीव सोर छंडि रे।
कुबेर बेर कै कही न यक्ष भीर मंडि रे।
दिनेस जाइ दूर बैठि नारदादि संगही।
न बोलु चंद मंद बुद्धि इन्द्र की सभा नहीं।।15

वीभत्स रस :

केशव के ग्रंथों में प्रसंगवश यत्रतत्र वीभत्स रस -की अभिव्यक्ति हुई है। वीभत्स एवं हास्य में व्यंजक -प्रायः आश्रय पाठक ही होता है। जुगुप्सा पक्ष का विधान -सामग्री की योजना द्वारा विभाव करने मात्र से ही वीभत्स की सृष्टि हो जाती है। नीचे दिए गए पद में परम्परागत युद्धवर्णन के -प्रसंग में वीभत्स की अभिव्यंजना हुई है।

अतिरूरी राजत रनथली।
जूझि परें तहँ हय गज बली।।
खण्डनि खण्ड लसैं गज कुम्भ।
श्रोनित भर भभकन्त भुसुण्ड।।16

करुण रस : केशव ने करुण रस के चित्र में भाषा की सांकेतिकता की अपेक्षा गंभीरता की अभिव्यंजना के लिए व्यंजनाशक्ति का आश्रय -लक्ष्मण को लेकर चले -लिया है। विश्वामित्र राम जाते हैं तो वृद्ध पिता दशरथ को तीव्र हार्दिक वेदना होती है, परन्तु वह संपूर्ण गंभीर वेदना मौन द्वारा व्यंजित की गई है-

राम चलत नृप के जुग लोचन
वारि भरित भे वारिद रोचन।
पायन परि ऋषि के सजि मौनहिं
केसव उठि गए भीत भौनहिं।।17

शोक के कारण नेत्रों से अश्रु बह रहे हैं। राजसभा में राजा का रोना उनकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं था। संभवतः 'भौन' में जाकर राजा दशरथ फूट-फूटकर रोए हैं।

इसी प्रकार कौशल्या आदि माताएं राम के इस प्रश्न को सुनकर कि पिताजी तो सकुशल हैं न, एकसाथ रुदन करने लगती हैं -

तब पूछियो रघुराई। सुभ है पिता तन माई।
तब पुत्र को मुख जाई। क्रम तैं उठीं सब रोइ।।18

एक अन्य स्थल पर भी लक्ष्मणमूर्छा के साथ -राम का करुण क्रन्दन प्रस्तुत करते हुए कवि केशवदास ने निम्नांकित चित्र अंकित किया है

वारक लक्ष्मण मोहि विलोकौ। मोकहँ प्रान चले तजि, रोकौ।
हौं सुमरों गुन केतिक तेरे। सोदर पुत्र सहायक मेरे।
लोचन बाहु तुही धनु मेरो। तू बल विक्रम वारक हैरौ।
तो बिनु हौं पल प्रान न राखौं। सत्य कहौं कछु झूठ न भाखौं।19

हास्य रस रावण का यज्ञ ध्वंस करने के लिए : भेजे गए वानर चित्रशाला में मन्दोदरी को ढूंढते हैं। चित्रशाला में चित्र की सुन्दरियों को देखकर अंगद रावण की रानियां समझते हैं, उन्हें पकड़ने के लिऐ दौड़ते हैं, परन्तु पास जाकर उन्हें अपनी भ्रान्ति का ज्ञान होता है। इस बात को देखकर देवकन्याएँ हँस पड़ती हैं।-

भगीं देखिकै संकि लंकेसबाला। दुरी दौरि मंदोदरी चित्रसाला।
तहां दौरिगौ बालि को पूत बुल्यौ। सबै चित्र की पुत्रिका देखि भूल्यौ।
गहै दौरि जाकों तजै ता दिसा कौं। तजै जा दिसा

कों भजै वाम ताकों।
भली कै निहारी सबै चित्रसारी। लहै सुन्दरी क्यों दरी को बिहारी।
तजै दृष्टि के चित्र की सृष्टि धन्या। हँसी एक ताकों तहीं देवकन्या।।20

यहां देवकन्या आश्रय है और अंगद आलम्बन। अंगद का चित्र की पुतली को रानी समझकर पकड़ना उद्दीपन है।

अद्भुत रस :

केशवदास ने अद्भुत का वर्णन न्यूनतम मात्रा में ही किया है।

केसोदास बाल वैस दीपति तरूनि तेरी, बानी लघु बरनत बुधि परमान की।
कोमल अमल उर उरज कठोर जाति, अबला पै बलबीर बन्धनविधान की।-
चंचल चितोनि चित अचल सुभाव साधु, सकल असाधु भाव काम की कथान की।
बेचति फिरति दधि जलेत तिन्हें मोल लेत, अद्भुत रसभरी बेटी वृषभानु की।21

शान्त रस

कवि केशव ने शान्तरस की भी बड़ी सुन्दर व्यंजना कराई है। यथा-वृद्धावस्था का वर्णन-

कँपैबर बानि डगै उर डीठि त्वचास्ति कुचै सकुचै मति बेली।
नवै नवग्रीव थके गति केशव बालक तैं संगहीं संग खेली।
लिए सब आधिन व्याधिन संग जरा अब आवै ज्वरा की सहेली।
भगैं सब देहदशा-, जियसाथ रहे दुरि दौरि दुरास - अकेली।।22

अर्थात् वाणी कांपने लगती हैं, दृष्टि डगमगाने लगती है, त्वचा अत्यन्त ढीली होकर सिकुड़ जाती है, वृद्धावस्था में जीव के साथ केवल एक दुराशामात्र छिपी हुई रह जाती है।-

संसार की असारता का एक चित्र और देखिए-

हाथी न साथी न घेरे न घेरे न गाउँ नठाउँ विलैहैं।
तात न मात न पुत्र न मित्र न वित्त न तीय कहूं संग रैहैं।
केसव काम के राम बिसारत और निकामरे काम न ऐहैं।
चेति रे चेति अजौं चित अन्तर अन्तक लोक अकेलेही जैहैं।।23

निष्कर्ष :

अतः उपर्युक्त विवेचन से निष्कर्ष निकलता है कि आचार्य केशव का रसों पर पूर्ण अधिकार था। उनकी कृतियों में रसों का पूर्ण परिपाक पाया जाता है। हिन्दी के कुछ प्रमुख कवियों की भांति उन्होंने किसी रसविशेष को- लेकर कविता नहीं की, अपितु अपनी रचनाओं में सभी रसों का समावेश किया है। तथापि सर्वाधिक अवसर श्रृंगार को मिला है। रसव्यंजना में उन्होंने स्वाभाविक-, सजीव एवं आकर्षक चित्र अंकित किए हैं। शृंगाररस के रसराजत्व को दिखाते हुए अन्य रसों का श्रृंगार में सुन्दर रूप में अंतर्भाव किया है। उदाहरणों में जो सरसता एवं हृदयहारिता है, वह कवि के हृदय की पूर्ण परिचायिका है। केशवदास जी के अनुसार मुखवाणी आदि के द्वारा मन -नेत्र- की बात अथवा चित्तवृत्ति का जो रूप अभिव्यक्त होता है, उसका नाम भाव है। दूसरों शब्दों में कह सकते हैं कि भाव अनुभावों के द्वारा प्रगट होते हैं। भावों की यह परिभाषा ही अभिनवगुप्त की परिभाषा से प्रभावित है। अभिनवगुप्त के अनुसार ही केशवदास भी भावों को पाँच प्रकार का मानते

हैं विभाव -, अनुभाव, स्थायी, सात्विक और व्यभिचारी भाव।24 केशवकृत 'रामचन्द्रिका' में उनकी रस विषयक मान्यताओं को साकार देखा जा सकता है। यह उनकी कविदृष्टि और काव्य - के मध्य तादात्य का प्रमाण है।

भाव सु पांच प्रकार के सुनि विभाव अनुभाव
थाई सात्विक कहत हैं, व्यभिचारी कविराव।।

संदर्भ-:

1. यमुपारधना श्रात्यिरस आद्यः प्रवर्तते। विश्वनाथ-, प्रेमरसायन
2. रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव। बाणभट्ट -, कादम्बरी
3. Poets are all ho wlove, who feel great truths And tell them, and the truth of truths is love. - Baily
4. रसिकप्रिया, प्रथम प्रभाव, छन्द 16
5. रामचन्द्रिका, तीसवां प्रकाश, छन्द 16
6. वही, बत्तीसवां प्रकाश, छन्द 38
7. वही, इकतीसवां प्रकाश, छन्द 40
8. वही, उन्नीसवां प्रकाश, छन्द 31
9. वही, एकादश प्रकाश 27
10. वही, उन्नीसवां प्रकाश, छन्द 9
11. वही, सैंतीसवां प्रकाश, छन्द 16-17
12. वही, सप्तम प्रकाश, छन्द 42
13. वही, तेरहवां प्रकाश, छन्द 62-63
14. वही, सातवां प्रकाश, छन्द 2
15. वही, सोलहवां प्रकाश, छन्द 2
16. वीरसिंह देव चरित, भारत जीवन प्रेस, पृष्ठ संख्या 353
17. रामचन्द्रिका, द्वितीय प्रकाश, छन्द 27
18. वही, दशम प्रकाश, छन्द 30
19. वही, सत्रहवां प्रकाश, छन्द 44-45
20. वही, उननीसवां प्रकाश, छन्द 26,27,28
21. वही, चैदहवां प्रभाव, छन्द 34
22. वही, चैबीसवां प्रकाश, छन्द 11
23. वही, सोलहवां प्रकाश, छन्द 26
24. रसिक प्रिया, 6/2